सेवा ही जीवन का आधार

जी. एस. रावत*

भारत प्राचीन समय से ही त्याग एवं सेवा का स्रोत रहा है। विश्वमानवता को जीवन्त रखने के लिए ऐसा कौन सा प्रयास है जो कि भारत ने न किया हो। विज्ञान एवं तकनीकी का उद्भव यहां बहुत पहले ही हो चुका था। धनवन्तरी का चिकित्साशास्त्र आज भी विश्व के चिकित्सा-वैज्ञानिकों को चमत्कृत कर देता है। चिकित्सा एवं विज्ञान के क्षेत्र में नारी भी पुरुष की अपेक्षा पीछे न रही, एक मां, एक बहन, एवं एक सेविका के रूप में सृष्टि में जन्म लेने वाला शिशु सर्व प्रथम नारी ही के दर्शन करता है। वह नारी, चाहे मां हो या दायी अथवा परिचारिका (Nurse)। वह परिचारिका जो कि प्रसव-पीड़ा में व्याकुल नारी को अपना सुख देकर उसका दुःख बांटती है तथा नवजात शिशु को मां के स्तनामृत का पान कराती है।

समय की गति के साथ सामाजिक मान्यताओं तथा प्राचीन साधनों में जो एक क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ वह था चिकित्सा विज्ञान (Medical Science) के क्षेत्र में, क्योंकि जड़ी-बूटियों द्वारा उपचारित रोगी को एक वृहत्तर प्रणाली के अन्तर्गत उपचार मिलने लगा, अन्धविश्वासियों एवं रूढ़िवादी वैद्यों का स्थान कुशल योग्य चिकित्सकों ने ले लिया। दायी का स्थान ले लिया शिक्षित एवं प्रशिक्षण प्राप्त परिचारिका ने, इसके साथ ही एक विशाल हौस्पिटल प्रणाली का विकास होता गया और इस प्रणाली में अन्य आवश्यकताओं के साथ-साथ ऐसे हृदयों की आवश्यकता पड़ी जो कि सामान्य हृदय से भिन्न हो, जिसमें एक ओर करुणा और दूसरी ओर अदम्य साहस हो। जो कि दर्द से कराहते रोगी की पीड़ा को अपनी पीड़ा समझे। यह सब जोखिम केवल एक सम्वेदनशील हृदय ही उठा सकता था। नारी स्वभाव से ही पुरुष की अपेक्षा ज्यादा सम्वेदनशील रही है, अतः उसे ही इस कार्य के लिए सर्वथा उपयुक्त माना गया और आज वह चिकित्सा प्रणाली का एक महत्वपूर्ण पुर्जा है एक परिचारिका के रूप में। फ्लोरेंस नाइटिंगेल परिचारिका व्यवसाय (Nursing Profession) की जन्म-दात्री थी। इस महान व्यक्तित्व वाली महिला ने "**सेवा ही जीवन का आधार**" के सिद्धान्त को लेकर अपना उद्देश्य मानकर अन्त तक पूरा किया और क्रीमिया के युद्ध में घायल हजारों सैनिकों को नया जीवन दिखाया। तत्पश्चात् धीरे-धीरे यह व्यवसाय आज पूर्ण रूप से उन्नत शिखर पर पहुंच गया है।

परिचारिकाओं के सेवा भाव को देखते हुए एक बार 'महात्मा-गांधी' ने कहा था—"अगर मुझे सेवा करनी है तो मैं हौस्पीटल सर्विसेज (Hospital Services) को प्रमुखता दूंगा" और वास्तविकता भी यही है। कितनी बड़ी कला है इन परिचारिकाओं के पास जो रोगी को अपनी व्यवहार कुशलता से एक नया जीवन प्रदान करती हैं। न जाने कितनी दया एवं करुणा का भण्डार भरा है इनके पवित्र हृदयों में, जिनकी निगाह में कोई भेद नहीं, न वर्ग का न जाति का, किसी से गिला व शिकवा करना तो शायद इनके जीवन में है ही नहीं रात-रात चौकन्ना रहना रोगी की हर कराह पर उसके पास जाना, उसे उपचार देना, दर्द को कम करने के लिए सान्त्वना के शब्दों का इन्जैकशन लगाना, मन बहलाने का प्रयास करते रहना, समय-समय पर सफाई आदि का ख्याल रखना आदि क्या कुछ नहीं करना पड़ता है उसे रोगी की कुशलता के लिए। कितने मधुर शब्दों से वह सम्बोधित करती है बाबा, माताजी, भाई, मुन्नू आदि-आदि, इतना ही नहीं किस्म-किस्म के रोग से पीड़ित रोगियों से जूझना, रोगी के हित के लिए अपने शरीर की कोई परवाह ही नहीं, जैसे कि अपना शरीर उसने सेवा के लिए ही अर्पण कर लिया हो, न उसे छूत की बीमारी का भय है, न 'पीव' एवं मल-मूत्र से घृणा इसके निर्विकार भाव को देखते हुए अगर परिचारिका को 'देवी' की संज्ञा दी जाय तो अतिशयोक्ति न होगी।

वर्तमान युग समस्या प्रधान युग है। अतः परिचारिका व्यवसाय भी अनेक समस्याओं से घिर गया है, जितना कुछ इनकी सेवाओं का प्रतिफल मिलना चाहिए वह कम ही है। बेरोजगारी, सेवा की असुरक्षा, सेवानिवृत्ति (Retirement) के बाद जीविका की समस्या आदि ऐसी समस्याएं हैं जिनका समाधान अत्यावश्यक है हालांकि भारत सरकार ने इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण सुधार किये हैं परन्तु कहीं-कहीं पर आज यह समस्याएं ज्यों की त्यों बनी हुई हैं। इस क्षेत्र में पूर्ण सफलता तभी मान्य होगी जब एक सम्मानित जीवन जीने का स्थान परिचारिका को मिल सके ताकि परिचारिका आर्थिक संकट में न रहे और राष्ट्र उसकी अमूल्य सेवाओं का पूर्णरूपेण लाभ उठा सके।

*श्री गुमानसिंह रावत भारतीय परिचारिका संगठन मुख्य कार्यालय (TNAI office) के एक कार्यकर्ता हैं।

हम हिन्दी सैक्शन के विकास करने का प्रयत्न कर रहे हैं। पाठकों से अनुरोध है कि वे अपनी रचनाएं भेजें।

सम्पादक